मछलियों की बीमारियाँ - पहचान एवम् उपचार

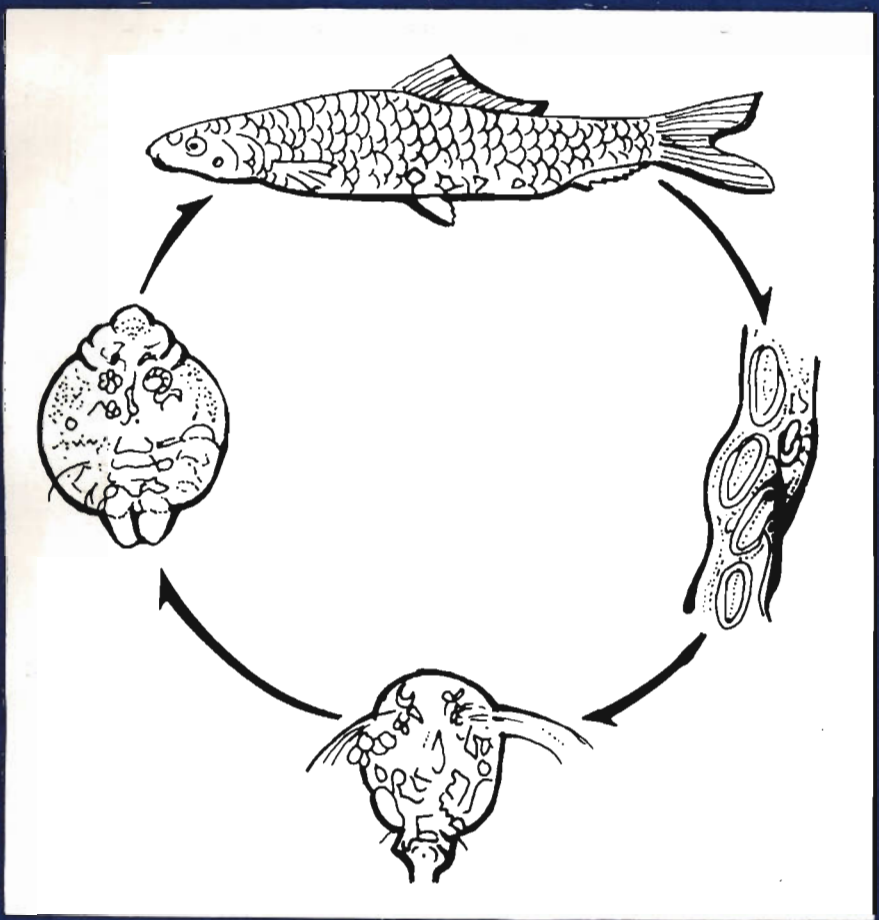

केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
बैरकपुर - 743 101 : पश्चिम बंगाल

मछलियों की बीमारियाँ - पहचान एवम् उपचार

बलबीर सिंह

बुलेटिन न. 110

दिसम्बर 2001

केन्द्रीय अंतर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

बैरकपुर - 743101, पश्चिम बंगाल

मछलियों की बीमारियाँ - पहचान एवम् उपचार

- बलबीर सिंह

ISSN 0970-616 X

©
2001

इस बुलेटिन में प्रकाशित सामग्री का कोई भी अंश प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना पुनः प्रस्तुति या वितरित नहीं किया जा सकता ।

सहायता : पी. आर. राव, मो. कासिम एवं जेम्स मुर्मू

कॉवर डिजाइन : पी. दासगुप्ता

कम्पोजिंग : हिन्दी कक्ष
सी.आई.एफ.आर.आई., बैरकपुर

प्रकाशित : निदेशक, सी.आई.एफ.आर.आई., बैरकपुर

प्राक्कथन

बढ़ती जनसंख्या के परिपेक्ष में संतुलित भोजन, जिसमें पशु प्रॉटीन यथोचित मात्रा में हो, की समुचित व्यवस्था एक गंभीर समस्या है । विश्व का वर्तमान दौर एक कठीन परिस्थिति से गुजर रहा है, क्योंकि बढ़ती आबादी के संदर्भ में प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ रहे अप्रत्याशित भार के कारण मात्र संसाधन ही नहीं सिकुड़ रहे अपितु उनमें विकार भी उत्पन्न हो रहे हैं । जहाँ तक पशु प्रॉटीन की समुचित व्यवस्था की बात है तो मत्स्याहार को प्रोत्साहित कर इस समस्या को कुछ हद तक काबू किया जा सकता है । परन्तु, हमारी जल सम्पदाएँ जिनमें जैविक सम्पदाएँ भी समाहित के परिस्थिति में निरंतर गिरावट के लक्षण देखने को मिल रहे हैं और मानव हित के लिए आवश्यक जीव-जन्तु विभिन्न रोगों से ग्रसित हो रहे हैं । समुचित एवम् संतुलित भोजन की व्यवस्था का सीधा अर्थ है उत्पादन में यथोचित बढ़ोत्तरी और इसके लिए आवश्यक है स्वस्थ संसाधन तथा स्वस्थ उत्पादन । मत्स्य उत्पादन के संदर्भ में भी यह अक्षरशः सत्य है । मत्स्य उत्पादन में वृद्धि से जुड़े विभिन्न आयामों में मछलियों पर हो रही बीमारियों का सही आकलन तथा समुचित समाधान की अत्यधिक आवश्यकता है । ताकि बीमारियों के द्वारा उत्पादन में हो रही क्षति की रोकथाम हो सके । इधर कुछ वर्षों में बढ़ते जलीय प्रदूषण के परिपेक्ष में अनेक प्रकार के मत्स्य बीमारियों ने चुनौती का स्वरूप ग्रहण कर लिया है । अतः समय रहते अगर इस दिशा में कारगर कदम नहीं उठाये गये तो मत्स्य प्रजातियों तथा मत्स्य उत्पादन को गहरा धक्का लग सकता है एवम् हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था चरमारा सकती है ।

मत्स्य पालन के इस महत्वपूर्ण आयाम के संदर्भ में यह पुस्तिका अत्यन्त ही कारगर सिद्ध होगी ऐसी मेरी अवमानना है । क्योंकि यह सरल भाषा में लिखी गयी है जिसे मछली पालक सरलता पूर्वक समझ कर अपने तालाबों में हो रहे मत्स्य बीमारियों की पहचान कर पायेंगे तथा इस पुस्तिका में उद्धृत उपचार पद्धतियों को यथोचित अपना कर अपनी मत्स्य फसल को बचा पायेंगे ।

(वी. वी. सुगुणन्)
निदेशक

आभार

इस पुस्तिका के लेखन के दौरान डॉ.बी.सी.झा, प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर तथा डॉ. सुरेश कुमार, तकनीकी अधिकारी, केन्द्रीय मीठा जल-जन्तु पालन संस्थान, कौशल्यागंज, भुवनेश्वर (केन्द्र इलाहाबाद) से जो सहयोग प्राप्त हुआ उसके लिए मैं आभारी हूँ ।

मैं डॉ. वी.वी.सुगुणन्, निदेशक, केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर का भी आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तिका के मात्र प्रकाशन में ही रूचि नहीं दिखायी अपितु उचित मार्गदर्शन भी दिया ।

मैं संस्थान के हिन्दी कक्ष विशेष रूप से श्री पी.आर.राव, सहायक निदेशक (राजभाषा), मो. कासिम, भाषा सहायक हिन्दी तथा श्री जेम्स मुर्मू, हिन्दी अनुवादक के प्रति विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तिका के प्रकाशन में सार्थक सहयोग दिया ।

बलबीर सिंह

मछलियों की बीमारियाँ
- पहचान एवम् उपचार

बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ प्रोटीन खाद्यों की ओर समाज की बढ़ती जागरूकता के परिपेक्ष में मत्स्य पालन अब देश के सभी अचलों में छोटे बडें अनेक तरह के तालाबों पोखरों में व्यापक रूप से अपनाया जाने लगा है । वैज्ञानिक तकनीकियों के बेहत्तर उपयोग से उत्पादन में भी गुणात्मक वृद्धि प्राप्त की जा रही है । अन्य व्यवसायों की तरह ही हाल के वर्षों में मछली पालन के सघनीकरण से कुछ समस्यायें भी प्रकट होने लगी है, जिनमें अनेक प्रकार के रोगों का संक्रमण का एक प्रमुख समस्या है । रोगों और उनके उपचार विधियों की अज्ञानता के कारण मत्स्य पालकों को बहुत अधिक आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है । कभी-कभी तो बीमारियाँ व्यापक रूप से फैल कर पूरे क्षेत्र की मत्स्य फसल को नुकसान पहँचा देती हैं । इसका नवीनतम उदाहरण लगभग एक दशक से अधिक समय से देखी जाने वाली लाल घाव नामक बीमारी है । इस बीमारी से खारे एवम् मीठे पानी की नदियों, पोखरों, जलाशयों, झीलों, तालाबों आदि की मछलियाँ अत्यंत प्रभावित हुई हैं, जिससे लाखों मत्स्य पालकों को आर्थिक क्षति उठानी पड़ी । इसी प्रकार खारे पानी के झींगों में *ह्वाइट स्पॉट* नामक रोग सफेद दाग की बीमारी का अति व्यापक रूप से संक्रमण एक चुनौती के रूप में उभरकर सामने आया है । बीमारियों के प्रकोप से न केवल खाने योग्य मछलियों का उत्पादन प्रभावित होता है बल्कि इसमें प्रजनक मछलियों के अंडा देने की क्षमता में भी कमी आ जाती है । फलतः हैचरी में मत्स्य बीज उत्पादन एवम् इसकी आपूर्ति भी प्रभावित होती है । नर्सरी तालाबों में संचय किये गये जीरों में रोगों के संक्रमण हो जाने से उत्तरजीविता दर में अत्यधिक कमी आ जाती है । नदियों तथा नहरों में रोगों के फैलाव से अनेक मत्स्य प्रजातियों के विलुप्त

होने की संभावना बढ़ जाती है । अपेक्षित संख्या में मत्स्य बीज एवम् खाने योग्य मछलियों के उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त करने में अन्य तरह के तमाम जानकारियों के साथ-साथ मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन की जानकारी भी अत्यंत वांछनीय है, अन्यथा परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से उत्पादन प्रभावित होकर आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है । प्रस्तुत जानकारी इन्हीं सब तथ्यों को आधार बनाकर लिखी गई है । ऐसा देखा गया है कि मीठे जल के पालन तालाबों में रोगों के अचानक उत्पन्न हो जाने से मत्स्य पालक असमंजस की स्थिति में आ जाते हैं । इस स्थिति से सफलतापूर्वक उबरने हेतु दी गई जानकारियाँ आशा है, सही मार्ग निर्देश दे पाने में सक्षम होगी ऐसा प्रयास किया गया । तालाबों में बीमारियों के उत्पन्न होने में जिम्मेदार कारक, इनके विशिष्ट लक्षण, विभिन्न रोगों की पहचान एवम् लक्षण, उपचार हेतु अपनायी जाने वाली विभिन्न विधियाँ,जलीय परिवेश की मछलियों को रोगग्रस्त करने में भूमिका, विभिन्न तरह के रसायण, दवाई आदि की जानकारी भी दी गई है । अनचाही होने वाली इस मत्स्य स्वास्थ्य समस्याओं को मत्स्य पालक भली-भाँति जान सकें, इसके लिये विभिन्न रोग के जिम्मेदार रोगाणु, परजीवी, विभिन्न रोगों से ग्रस्त मछलियाँ एवम् अन्य तरह की जानकारियों को चित्रों एवम् रेखांकन के माध्यम से दर्शाया गया है । इस व्यवसाय से अपनी आजीविका चलाने वाले मत्स्य पालक इस प्रसार पुस्तिका की सहायता से रोगों की प्रभावी रोकथाम कर, तालाब के मत्स्य उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि अर्जित करेगें, ऐसी आशा है ।

बीमारी के कारण

सामान्यतः मछलियों में विभिन्न तरह के रोगों का अतिक्रमण मुख्य रूप से तीन घटकों यथा, *उपस्थित रोगाणु, जलीय वातावरण द्वारा उत्पन्न तनाव* एवम् *इनके संपर्क में रहने वाली मछलियों की संवेदनशीलता* पर निर्भर करता है चित्र 1 । जलीय

वातावरण से उत्पन्न तनाव रोग होने की प्रक्रिया को दो तरह से उत्प्रेरित करता है । जहाँ इससे एक ओर रोगाणु की प्रचण्डता बढ़ती है, वहीं दूसरी ओर यह तालाब की मछलियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी कमी लाता है ।

चित्र - 1

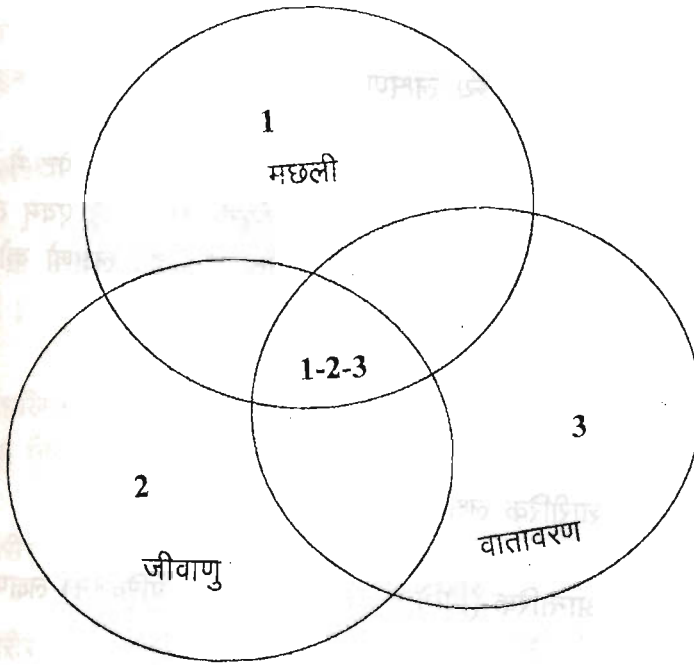

मछलियों में मृत्यु की आशंका उस समय और अधिक बढ़ जाती है जब घटक (1) और (2) वातावरण (3) में उपस्थित हो । लेकिन यदि मछलियाँ एवम् रोगाणु (1, 2) परिवेश में हो, परंतु जलीय

वातावरण की गुणवत्ता ठीक हो, तब बीमारी होने की संभावना बहुत ही कम रहती है । इसी तरह यदि रोगाणु तालाब में उपस्थित नहीं है, उस अवस्था में भी बीमारियाँ नहीं होती हैं । जो वातावरण रोगाणु के वृद्धि में सहायक होता है, सामान्यतः मछलियों के लिये हानिकारक होता है । इसके विपरीत उस तरह का जलीय परिवेश जिसमें मछलियाँ सामान्य गतिविधियाँ करती हैं और इसकी गुणवत्ता अनुकूल होती है, क्योंकि इस अवस्था में रोग पैदा करने वाले रोगाणुओं की उचित वृद्धि नहीं हो पाती है ।

बीमारियों के सामान्य लक्षण

जब भी तालाब की मछलियाँ किसी रोग की चपेट में आती है तो इनमें अनेक तरह के परिवर्तन परिलक्षित होते हैं एवम् तीव्रता से बीमारी की गंभीरता पर आधारित होती है । इन लक्षणों को मोटे तौर पर तीन भागों में बाँटा जा सकता है ।

- व्यवहारिक लक्षण
- शारीरिक लक्षण
- आन्तरिक (विभिन्न महत्वपूर्ण अंगों में परिवर्तन) लक्षण

व्यवहारिक लक्षण

- मछलियों को दिये गये खाद्य का ग्रहण न करना ।
- मछलियों का तालाब के किनारें पर एवम् सतह पर बार बार आना ।

- पानी के प्रवेश द्वार पर आना एवम् खरपतवार के नीचे रहना ।

- उल्टा-सीधा चक्कर लगाना एवम् सुस्त होकर धीरे-धीरे पानी में तैरना ।

- मछलियों का एक साथ एकत्र होना ।

- कुछ आवाज करने पर भी मछलियों की सतह पर आते रहना ।

शारीरिक लक्षण

इस तरह के लक्षणों की जाँच रोगग्रस्त मछलियों के परिरक्षण से प्राप्त होते हैं ।

- मछलियों के शरीर पर अत्याधिक *म्यूकस* (लसलसा द्रव्य) का निकालना ।

- शरीर के रंग का असामान्य होना ।

- शरीर के ऊपर छोटे-बड़े घाव दिखाई देना या पंखों के नीचे हल्के-हल्के लाल-लाल घाव दिखाई देना ।

- शरीर के ऊपर सफेद या काले रंग की सरसों के दाने के बराबर, उभार आदि दिखना ।

- पेट का फूलना एवम् शल्कों का निकलना अथवा शल्कों के बीच में द्रव्य जमा होना ।
- मछलियों का पखों का टूटना अथवा सड़ना ।
- मछलियों की आँखों में सूजन आ जाना ।
- मछलियों का अत्यधिक कमजोर दिखाई देना (पतला शरीर तथा सिर बड़ा) ।
- मछलियों के मुँह की थुथनी का बढ़ जाना ।
- गलफड़ों का टूटना, सड़ना, इनमें सफेद रंग की ग्रन्थि (*Nodule*) आकार के कोष्ठ का दिखाई देना ।
- गलफड़ों का रंग अत्यधिक गुलाबी दिखाई देना ।
- गलफड़ों,शरीर के घावों के ऊपर या पंखों में रूई जैसी संरचना का दिखना ।

आन्तरिक लक्षण

इस तरह के परिवर्तनों को प्रयोगशाला में मछलियों के उदर के काट कर देखने से ज्ञात किया जा सकता है ।

- आँत एवम् वाह्य भित्ति के बीच गाढ़े सड़न वाले द्रव्य का निकालना अथवा पानी जैसे द्रव्य का निकालना ।

- लीवर का रंग असामान्य होना ।
- गुर्दों का टूटा या सड़ा दिखाई देना ।
- आँत में कृमि आदि का मिलना ।
- लीवर गुर्दे अथवा अन्य आंतरिक अंगों में छोटे-छोटे गांठ (सिस्ट) दिखाई देना।

अंग विशेष एवम् रक्त इत्यादि में रोगाणुओं की उपस्थिति एवम् इनके द्वारा किया गया नुकसान आदि की जानकारी के लिये प्रयोगशाला में भिन्न-भिन्न तरह के परीक्षण किये जाते हैं। बड़े, वाह्य परजीवी एवम् कवक आदि की पहचान आसानी से हो जाती है । लेकिन बैक्टीरिया आदि से उत्पन्न बीमारियों की जाँच प्रक्रिया अपेक्षाकृत थोड़ी जटिल होती है ।

संक्रामक बीमारियाँ

इस प्रकार के संक्रमण उत्पन्न करने के लिये परजीवी अथवा जीवाणु या विषाणु आदि की प्रमुख भूमिका होती है । ये शरीर के वाह्य अथवा आंतरिक अंगों में किसी तरह प्रविष्ट कर मछली की सामान्य शारीरिक क्रियाओं को प्रभावित करते हैं और मछली रोगग्रस्त होकर कमजोर होने लगती है । कुछ संक्रामक बीमारियों की वजह से मछलियाँ बड़े स्तर पर मरने लगती है एवम् मृत्यु-दर प्रायः संक्रमण की तीव्रता पर निर्भर करती है । इसके अतिरिक्त कुछ संक्रामक बीमारियों में रोगाणुओं की कम संख्या एवम् रोग पैदा करने की शक्ति में गिरावट आदि की वजह से यद्यपि मछलियाँ मरती नहीं हैं, लेकिन अपरोक्ष रूप में खाद्य कम ग्रहण करना, कमजोर होना, बढ़वार में गिरावट आदि लक्षण प्रकट होते हैं । सामान्यतः मछली

पालक इस तरह के क्षीण संक्रमणों को अनदेखी कर देते हैं क्योंकि मृत्यु इसमें नहीं के बराबर होती है। परंतु इसका असर कुल मत्स्य उत्पादन में गिरावट के रूप में दिखाई देता है, जिसे मत्स्य पालक वर्ष के अन्त में ही ठीक से ज्ञात कर पाता है । एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि चूँकि मछलियों का सबसे प्रथम परिवेश जल है, अतः तालाब की पानी की भौतिक एवम् रसायनिक गुणों, जिन्हें समग्र रूप से जलीय गुणवत्ता भी कहा जाता है, की अत्यंत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है । सभी तरह की बीमारियों की गंभीरता, मृत्यु-दर, इनके प्रकट होने की संभावना आदि इस बात पर निर्भर करती है कि जलीय गुणवत्ता का स्तर क्या है ? जलीय गुणवत्ता में गिरावट, अनेक हानिकारक परजीवी जीवाणुओं के वृद्धि में सहायक होते हैं ।

1 मछली का जुआं (*आरगुलस*)

आरगुलस (*Argulus* spp) परजीवी द्वारा फैलाये जाने वाले इस रोग को सामान्यतः ***आरगुलोसिस*** अथवा ***मछलियों में जुएं की बीमारी*** के नाम से जाना जाता है । जैसा नाम से प्रतीत होता है यह परजीवी 5-8 मिमी. के जुएं जैसा दिखाई देता है, जिसे नग्न आँखों से भी मछलियों के ऊपर अथवा नीचे की पुखें की जड़ों पर मजबूती से चिपका हुआ देखा जा सकता है । मछलियों की बीमारी की तीक्ष्णता इस परजीवी की क्षमता पर निर्भर करता है । ये परजीवी 2-4 से लेकर हजारों की संख्या में देखे जा सकते हैं । अंगुलिकाओं में 2-4 परजीवी का भी पाया जाना घातक सिद्ध हो सकता है । यह संक्रमण विशेषकर बड़ी मछलियों में ज्यादा पाया जाता है । इस परजीवी के मुख में जहरीली ग्रन्थि पायी जाती है, जो मछली के शरीर से रक्त एवम् उत्तको के द्रव्य को चूसते हैं । इनके द्वारा शरीर के ऊपर किये गये घावों में फफूँदी एवम् जीवाणुओं के संचरण एवम् संक्रमण में भी सहायक होता है । प्रायः पालन तालाबों में अधिक

कार्बनिक खादों एवम् अधिक संचय दर से इस रोग के उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है ।

प्रभावित मछलियाँ पत्थरों अथवा तालाबों के किनारे पर स्थित ठोस वस्तुओं पर अपने शरीर का रगड़ने का प्रयास करती दिखाई देती है । शरीर से *म्यूकस* अथवा लसलसा द्रव्य अधिक मात्रा में निकलता है एवम् मछलियाँ अत्यधिक बेचैन रहती है और बार-बार ता्लाब की सतह तथा किनारों पर दिखाई पड़ती है ।

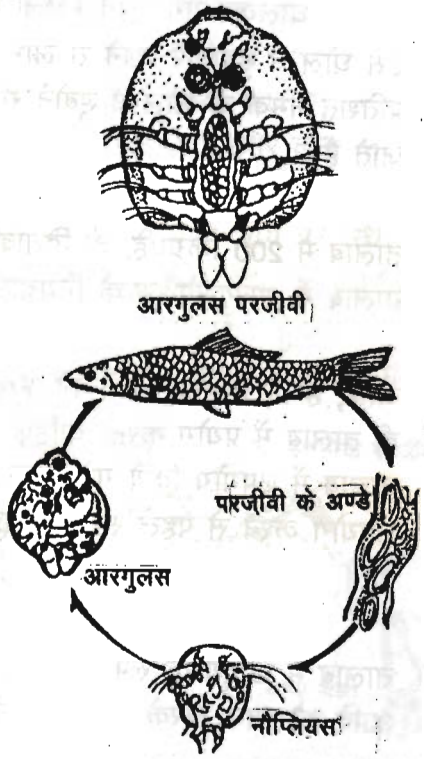

आरगुलस परजीवी का जीवन चक्र

उपचार

- तालाब के जल में कार्बनिक पदार्थों के प्रयोग में संतुलन तथा इसका उचित प्रबंधन ।

- *मैलाथियान* 0.25 मिग्रा/ली की दर से 8-10 दिन के अंतराल में 3 बार प्रयोग करना चाहिए ।

- एक ग्राम *पोटेशियम परमैगनेट* ($KMnO_4$) को 10 लीटर पानी में घोलकर रोगग्रसित मछली को 2-3 मिनट तक इस घोल में डुबोकर रखने से लाभ होता है अथवा 2.5 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोने से भी ये परजीवी छूट जाते हैं।

- तालाब में 200 किग्रा/हे. के हिसाब से चूने का प्रयोग भी तालाब में *आरगुलोसिस* के नियंत्रण में सहायक होता है ।

- जाल, हापा, हैन्डनैट आदि को अच्छी तरह धूप में सुखाकर ही तालाब में प्रयोग करना चाहिए । साथ ही संक्रमित तालाब में उपयोग किये गये जाक को दूसरे तालाब में उपयोग करने से पहले साफ सफाई कर लेनी आवश्यक है ।

- तालाब में खाद्य के रूप में दी जाने वाली जलीय पौधे आदि को साफ करके ही तालाब में प्रयोग करना चाहिए ।

- तालाबों में बाँस अथवा पेड़ की शाखाएँ डालने पर ये परजीवी अण्डा देती हैं, अतः इन्हें एक हफ्ते के अंतराल में बाहर निकाल कर धूप में सुखाने के पश्चात् फिर डाल देने से तथा इस प्रक्रिया को बार-बार अपनाने से संक्रमण दर में प्रभावी कमी आती है ।

2. एन्कर वर्म (*लर्नियोसिन*) का संक्रमण

यह परजीवी *लरनिया* (*Lernaea*) नाम से जाना जाता है तथा इससे उत्पन्न होने वाले रोग को ***लर्नियोसिस*** कहते हैं । इस परजीवी के नर रोग फैलाने में सक्षम नहीं होते हैं और स्वतंत्र जीवन बिताते हैं । यह रोगग्रस्त मछलियों के ऊपर हल्के काले-भूरे धागे के समान लटकते दिखाई देते हैं । इस परजीवी का शरीर लम्बा तथा मुँह लेंगर की तरह होता है । यही भाग मछली के त्वचा के अंदर तक घुस जाता है । शरीर का शेष भाग एवम् पश्च भाग पर स्थित अण्डों की दो थैलियाँ बाहर रह जाती है । यह मछलियों के उत्तकों का भक्षण करता है । जिससे मांसपेशियों को क्षति पहुँचाती है । धीरे-धीरे मछलियाँ कमजोर होने लगती हैं एवम् छोटी मछलियाँ मर भी जाती हैं ।

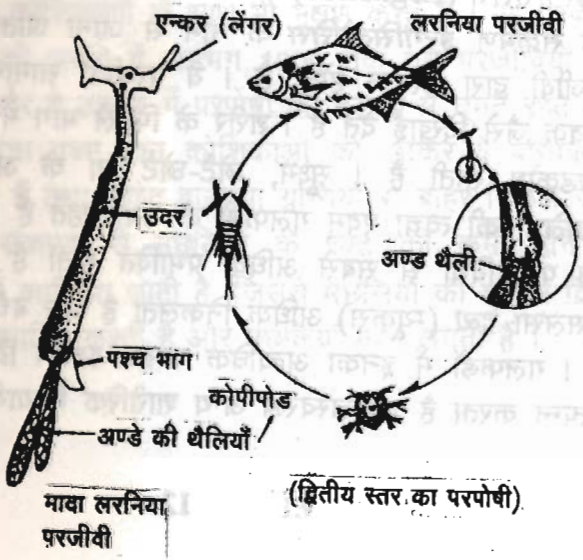

उपचार

- रोगग्रस्त मछलियों को 3-4 सप्ताह के लिये दूसरे तालाब में डाल देने से नवजात मछलियाँ न मिल पाने के कारण इन परजीवियों की मृत्यु हो जाती है।

- *ओरगोनेफास्फोरस* वर्ग के कीटनाशकों जैसे *मैलाथिआन* या *डाइलैक्स* के 0.1 मिग्रा/ली. घोल में संक्रमित मछलियों को 20-30 मिनट तक डुबोकर रखने से अथवा 1 प्रतिशत के घोल में 2-3 मिनट तक डबोकर फिर तालाब में छोड़ने से लाभ मिलता है ।

- तालाब में 0.1 मिग्रा/ली. के हिसाब से *मैलाथिआन* का एक हफ्ते के अन्तराल में दो तीन बार छिड़काव कर देने से इन परजीवियों से छुटकारा मिल जाता है।

3. इरगैसिलस का संक्रमण

इरगैसिलस (Ergasilus) नामक परजीवी द्वारा फैलाया जाने वाला यह संक्रमण ***इरगैसिलोसिस*** के नाम से जाना जाता है, जो मादा परजीवी द्वारा उत्पन्न होता है । ये परजीवी सामान्यतः देखने में प्लवक जैसे दिखाई देते हैं । शरीर के पिछले भाग में सफेद रंग की अण्डकोष रहती है । सूक्ष्म, छोटे-छोटे रंग के असंख्य परजीवी मछलियों की त्वचा एवम् गलफड़ों के ऊपर रहते हैं । भाकुर मछली इन परजीवियों से सबसे अधिक प्रभावित होती है । मछलियों में लसलसा द्रव्य (म्यूकस) अधिक निकलता है और बेचैन दिखाई देती है । गलफड़ों में इनका अत्यधिक जमाव श्वसन क्रिया में अवरोध उत्पन्न करता है । फलस्वरूप अन्य शारीरिक कियायें भी असामान्य

हो जाती हैं और मछलियाँ मरने लगती है । सभी उम्र की मछलियाँ इस बीमारी की चपेट में आती हैं ।

उपचार

मैलाथियान की 0.25 मिग्रा/लीटर की मात्रा का संक्रमित तालाबों में छिड़काव कर देने से ये परजीवी पूरी तरह नष्ट हो जाते हैं ।

4. खुजली या सफेद दाग का रोग

प्रोटोजोवा वर्ग के *इक्थोओपिथिरियस* (*Ichthiopthirius* sp.) नामक परजीवी द्वारा उत्पन्न जीरे एवम् अंगुलिकाओं का प्रमुख रोग है । इसमें मछलियों में खुजलाहट के साथ शरीर के ऊपर सफेद-सफेद दाने पैदा हो जाते हैं । इसी वजह से यह खुजली या सफेद दाग की बीमारी के नाम से भी जानी जाती है । रोगग्रस्त मछलियों की त्वचा एवम् पंखों के ऊपर 0.5-1.0 मिमी. आकार के सफेद दाने जैसी अत्यंत छोटी-छोटी ग्रन्थियाँ दिखाई पड़ती हैं, जिनके अन्दर ये परजीवी वास करते हैं । गलफड़ों पर भी इस तरह की संरचनायें देखी जा सकती है । ये परजीवी त्वचा के अन्दर घुस जाते हैं और रक्त की लाल कोशिकाओं के साथ भी भक्षण करते हैं । यह परजीवी 12-18 घन्टे की अवधि में लगभग 1000 तक नये परजीवियों को जन्म देता है और ये तालाब में परपोषी की तलाश में घूमते रहते हैं । मछली की त्वचा एवम् रक्त कोशिकाओं को खाकर ये परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं तथा सफेद दानेनुमा ग्रन्थियों से बाहर निकल जाते हैं । इनके संक्रमण से मछलियों के रक्त की कमी होने से *हीमोग्लोबिन* में कमी आ जाती है, जिससे मछलियों की श्वसन क्रिया बुरी तरह से प्रभावित करती है और मछलियाँ मरने लगती हैं ।

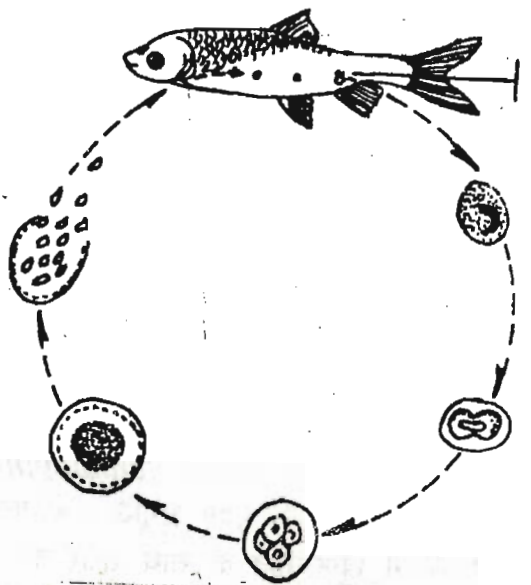

इक्थोऑपिथिरियस परजीवी का जीवन चक्र

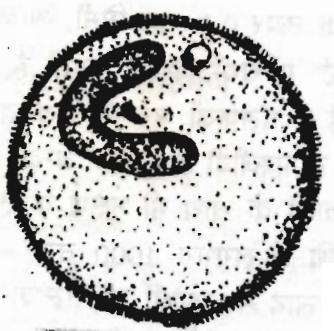

इक्थोऑपिथिरियस

उपचार

- रोग के रोकथाम के लिये तालाब में 200-300 किग्रा/ हे. की दर से चूने का प्रयोग लाभप्रद होता है ।

14 ग्राम *मैलाकाइट* ग्रीन को 5 लीटर *फारमलीन* (जिंक रहित) में घोलकर तथा इसके 1 मि.ली. घोल को 10 ली. पानी के साथ मिलाकर प्रभावित मछलियों को इसमें कुछ समय के लिये डाल देने से ये परजीवी मर जाते हैं । इस क्रिया को 3-4 दिन के अंतराल में दोहराने से संक्रमण पर नियंत्रण हो जाता है ।

- 1 ग्राम *मैथिलिन ब्लू* को 100 लीटर पानी में घोलकर प्रभावित मछलियों को इस घोल में कुछ देर तक डुबोकर रखने में भी लाभ होता है ।

- *कुनाइन हाइड्रोक्लोराईड* की 1 ग्राम मात्रा का 100 लीटर पानी में घोल बनाकर फिर इसमें मछलियों को कुछ देर तक डुबो कर रखने से परजीवी नष्ट हो जाते हैं ।

5. जीरों की *ट्राइकोडिनोसिस* बीमारी

प्रोटोजोवा वर्ग के *ट्राइकोडिना* (*Trichodina* spp) नामक परजीवी द्वारा यह रोग उत्पन्न होता है । मछलियों के जीरों एवम् अंगुलिकाओं में व्यापक रूप से पायी जाने वाली यह बीमारी काफी घातक होती है । संक्रमण कभी-कभी नर्सरियों में इतना अधिक होता है कि 70-80% तक जीरा इनकी चपेट में आकर मर जाते हैं । इस परजीवी के आक्रमण से रोगी मछलियों की त्वचा तथा गलफड़ों से अत्यधिक म्यूकस (लसलसा द्रव्य) स्रवित होता है, जिससे शरीर के ऊपर हल्के पीले रंग का आवरण पैदा हो जाता है । शरीर, पंखों तथा गलफड़ों पर भी अत्यंत सूक्ष्म लाल-लाल दाग बन जाते हैं । रोग की आखिरी अवस्था में पंख एवम् पूँछ भी सड़ अथवा

टूट कर गिरने लगते हैं तथा रोंगी मछलियाँ श्वसन में कठिनाई का अनुभव करती हैं, अतः बेचैनी की अवस्था दर्शाती हैं । सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा इन परजीवियों को आसानी से देखा जा सकता है ।

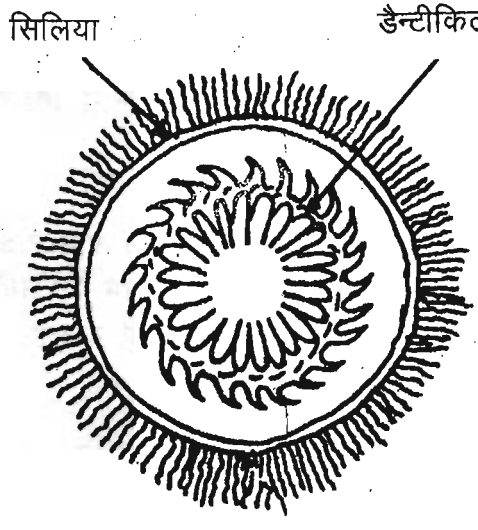

ट्राइकोडिना परजीवी

- 25 ग्राम नमक (खाने वाला) को 1 लीटर पानी में घोल कर संक्रमित मत्स्य बीज को हापा में एकत्र कर इस घोल में 2-3 मिनट तक डुबोकर रखने से ये परजीवी निष्क्रिय होकर शरीर से छूट जाते हैं । नमक के 2.5 प्रतिशत घोल को आवश्यकतानुसार 100-200 लीटर पानी में बनाया जा सकता है । नमक का घोल तालाब में नहीं देना चाहिए ।

- 1 ग्राम *एक्रीफ्लेबिन* (Acriflarvin) की 100 लीटर पानी में घोलकर मछलियों को इस घोल में एक घन्टे तक रखने से इन परजीवियों के नियंत्रण में सहायता मिलती है ।

- तालाब में *पोटेशियम परमैगनेट* 2 मि.ग्रा./ली. या *फारमैलिन* 15 मि.ग्रा. ली की दर से प्रयोग करने से संक्रमण पर काबू पाया जा सकता है । यह उपचार तालाब में देने से महंगा हो सकता है । घोल बनाकर संक्रमित मछलियों को डुबाने से कम खर्चीला होता है।

6. *मिक्सोस्पोरिडियन* परजीवियों द्वारा उत्पन्न रोग

यह रोग *मिक्सोस्पोरिडियन* प्रजाति के परजीवियों द्वारा उत्पन्न होता है । जिनकी तीन मुख्य प्रजातियाँ *मिक्सोवोलस* (*Myxobolus* spp), *हेनीगुआ* (*Henneguya* spp) एवम्थै *लहैलिनस* (*Thelohanellus* spp) सामान्यतः कार्प प्रजाति की मछलियों के गलफड़ों/ शरीर के ऊपर एवम् आंतरिक अंगों जैसे *लीवर* एवम् गुर्दों में भी प्रवेश कर जाते हैं । इसके अलावा *माइक्रोस्पोरिडियन* वर्ग के कुछ परजीवी जनन अंगों में भी निवास

करते हैं । फलतः संक्रमित मछलियों के प्रजनन शक्ति में कमी आ जाती है । शरीर के ऊपर शल्कों के बीच में छोटी-छोटी सफेद थैलीनुमा संरचनाऐं दिखाई देती है, जिन्हें सिस्ट कहा जाता है, जिनमें हजारों की संख्या में इन परजीवियों के *स्पोर्स* रहते हैं । इनकी यही अवस्था हानिकारक होती है । गलफड़ों के ऊपर भी इनके सिस्ट स्पष्ट दिखाई देते हैं । इनकी सघनता कभी-कभी इतनी अधिक हो जाती है कि मछलियों की श्वसन क्रिया बाधित हो जाती है और शरीर में ऑक्सीजन की कमी से मछलियों बड़ी संख्या में मरने लगती हैं । यह रोग सभी उम्र एवम् प्रजाति की मछलियों में पाया जाता है । *सिस्ट* अथवा कोष्ठ परिपक्वता ग्रहण करने के बाद शरीर से छूटने लगते हैं और उस स्थान पर हल्का सा घाव हो जाता है । इन पर अन्य जीवाणुओं का आक्रमण होता है, जो मछलियों को और अधिक तनावग्रस्त कर देते हैं । फलस्वरूप मछलियों कमजोर होकर मरने लगती हैं । जीरा संवर्धन तालाबों में एक प्रमुख बीमारी है ।

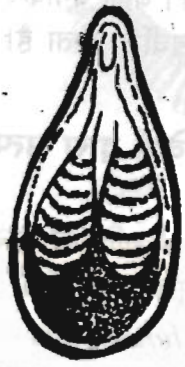

मिक्सोवोलस परजीवी

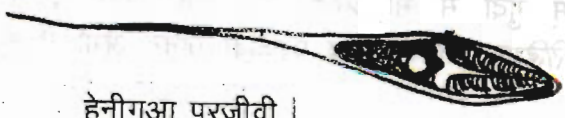

हेनीगुआ परजीवी

चूँकि *स्पोर्स* अवस्था ही परजीवी होती है और इनके ऊपर मजबूत खोल रहता है, जिससे सामान्यतः रोकथाम के लिये प्रयोग की जाने वाली दवाईयों आदि का असर अत्यंत अल्प अथवा न के बराबर होता है । इस बीमारी की रोकथाम हेतु प्रभावकारी प्रबन्धन कार्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । जैसे निश्चित अनुपात में मत्स्य बीज एवम् अंगुलिकाओं का संचय संतुलित आहार की आपूर्ति उपयुक्त जलीय गुणवत्ता एवम् संचय पूर्व तालाबों नर्सरियों में 40-60 मिग्रा./लीटर की दर से ताजे ब्लीचिंग पाउडर के प्रयोग से तलहटी एवम् पानी में पड़े *स्पोर्स* नष्ट हो जाते हैं । इसके अतिरिक्त जीरा संवर्धन नर्सरियों में अदला-बदली कर अलग- अलग प्रजातियाँ का संचय भी रोग के फैलाव में कमी लाता है ।

7. छोटी मछलियों में काले धब्बे की बीमारी

डिप्लोस्टोमियय्म (*Diplostomum*) नामक *डायजैनिक* कृमि द्वारा यह रोग पैदा होता है। इस वर्ग के कुछ अन्य परजरवीं भी इस तरह का रोग फैलाते हैं । इस परजीवी का जीवन चक्र मछली खाने वाले पक्षियों, घोंघा तथा मछलियों से गुजरता हुआ पूर्ण होता है । मछलियों में इस कृमि की *मेटासरकेरिया* अवस्था पायी जाती है, जो बाहरी त्वचा पर सख्ती से चिपके रहते हैं । त्वचा पर चिपकने और अन्दर धंसने के बाद मछलियों के शरीर से उत्पन्न होने वाला काले रंग का *पिगमेन्ट* स्त्रावित होता, है जो पूरी तरह काले कठोर *पिगमेन्ट* से ढक जाते हैं तथा राई के दाने के आकार दिखाई देते हैं । मछली के आकारानुसार इनकी संख्या 1 से लेकर 20-25 तक होती है । यद्यपि मछलियाँ सामान्यतः मरती कम हैं, लेकिन अत्यंत ही भद्दी दिखाई देती हैं तथा वजन में भी धीरे-धीरे बढ़ती है, चूँकि यह

मत्स्य बीज में ही पाया जाता है । अतः इस तरह के संक्रमित बीज की आपूर्ति मत्स्य पालक के लिये एक समस्या बन जाती है ।

उपचार

- तालाबों के घोंघो से यथासंभव मुक्त रखने की कोशिश करनी चाहिए ।
- जलीय घासों के समूल उन्मूलन से घोंघों की संख्या में कमी हो जाती है ।
- *सोडियम पेन्टाक्लोरोफिनिट* 10-12 किग्रा./हे./मी. पानी में प्रयोग लाभकारी होता है ।
- मछली खाने वाली पक्षियों के आगमन पर अंकुश लगानी चाहिए । *नर्सरी* या *रियरिंग* तालाबों के किनारे पेड़ इत्यादि नहीं लगाने चाहिए ।
- *पिकरिक* अम्ल के 3: 100000 घोल में एक घंटे तक संक्रमित मछलियों को डुबाने से ये परजीवी निष्क्रिय हो जाते हैं ।

8. *डैक्टालोगाइअरोसिसं एवम् गाइरोडैक्टाइलोसिस* रोग

प्लटीहैल्मैन्थिस फाइलम के मानोजैनिक कृमि वर्ग के अन्तर्गत आने वाले दो मुख्य परजीवी *डैक्टाइलोगाइरस* (Dactylogyrus spp.) एवम् *गाइरोडैक्टाइलस* (*Gyrodactylus spp.*) इस रोग

के प्रमुख कारण हैं । प्रभावित मछलियों के शरीर पर छोटे- छोटे लाल-लाल धब्बे दिखाई देना म्यूकस (लसलसा) द्रव्य का निकलना, मछलियों की बढ़वार में गिरावट आदि कुछ प्रमुख लक्षण हैं । *डैक्टाइलोगाइरस* आम तौर पर गलफड़ों पर ज्यादा आक्रमण करता है , इससे गलफडों पर सफेद लसलसी धारियाँ सी दिखाई देती है । रोग की अधिकता की स्थिति में गलफड़े इस तरह की धारियों से भर जाते हैं । जगह-जगह पर रक्त रंजित घाव भी दिखाई पड़ते हैं । दूसरा *गाइरोडैक्टाइलस* नामक परजीवी त्वचा पर अधिक एवम् गलफड़ों में कम पाया जाता है । तालाब के जल में जैविक एवम् कार्बनिक पदार्थों की अधिकता पी.एच. मान में कमी आदि इस बीमारी के सघन फैलाव में उत्प्रेरक का कार्य करते हैं । इन परजीवियों की सघन उपस्थिति से गलफड़ों एवम् त्वचा पर हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं और मछलियाँ मरने लगती हैं । सभी उम्र की मछलियाँ इस रोग की चपेट में आती हैं, लेकिन जीरा एवम् अंगुलिकाओं पर इनका दुष्प्रभाव अधिक होता है ।

गाइरोडैक्टाइलस
परजीवी

डैक्टाइलोगाइरस
परजीवी

उपचार

- 1% *फारमेलिन* के घोल में संक्रमित मछलियों को 2-3 मिनट तक डुबोने से लाभ होता है ।

- *मैलाथिआंन* 0.25 मिलीग्राम/ लीटर की दर से तालाब में छिड़काव कर देने से इन परजीवियों का प्रभावकारी नियंत्रण हो जाता है ।

- उचित तालाब प्रबन्धन इस रोग की रोकथाम एवम् नियंत्रण में अत्यंत ही सहायक सिद्ध होते हैं ।

9. कवकों (फफूँदी) द्वारा होने वाले रोग

कवकों अथवा फफूँदियों से होने वाले संक्रमणों में *सैपरोलैग्निया* (Saprolegnia) एवम् *ब्रकिओमाइसिस* (*Brachiomyces*) द्वारा उत्पन्न हाने वाली बीमारियाँ मछलियों में प्रमुख रूप से देखी जाती हैं । यद्यपि साधारणतः यह समझा जाता है कि इनसे पैदा हाने वाले विकार मौलिक नहीं होते, अपितु परोक्ष रूप से अन्य विकार के पश्चात् उत्पन्न होते हैं । लेकिन अब ऐसा पाया गया है कि अनेक महत्वपूर्ण बीमारियों के फैलाव में ये आरंभिक रोगाणु के रूप में भी पाये जाते हैं । पूर्व में आमतौर पर यह धारणा प्रबल थी कि जहाँ परजीवी या जीवाणुओं द्वारा घाव अथवा चोट आदि लग जाती है, वही पर ये परोक्ष रूप से संक्रमण के रूप में अपना प्रभाव जमाते हैं लेकिन अब धीरे-धीरे विशेषकर मछलियों के रोगों के विस्तृत अध्ययन से यह सिद्ध हुआ है कि ये मुख्य एवम् परोक्ष दोनों तरह के संक्रमण फैलाने में सक्षम होते हैं । अतः मौका परस्त होते हैं । बारम्बार जाल के प्रयोग, परिवहन के दौरान लगी

चोट अथवा परजीवियों से उत्पन्न जख्मों पर ये कवक फैलना प्रारंभ करते हैं । शरीर अथवा गलफड़ों के ऊपर रूई के सामाप सफेद-भूरे रंग की संरचानायें संक्रमित मछलियों में दिखाई देती है । इस रोग से मछलियों का कमजोर होना, घावों का बढ़ना, अन्धेपन तथा यकृत एवम् आँतों की सूजन आदि लक्षण प्रकट होते हैं ।

ब्रैकिओंमाइसिज कवक गलफड़ों के ऊपर जमा होकर रक्त बाहनियों में अवरोध उत्पन्न करता है, जिससे गलफड़े सड़ने लगते हैं और मछलियाँ ठीक से श्वांस न ले पाने के कारण मरने लगती है । प्रभावित मछलियाँ भोजन ग्रहण करना बन्द कर देती हैं एवम् सतह पर आकर एकत्रित हाने लगती हैं ।

कवक से ग्रसित मछली

के अलावा *सिधरी* में इसका व्यापक प्रकोप देखा गया है । पालन तालाबों में इस बीमारी का संक्रमण कम देखा गया है इसी वजह से इस रोग को आर्थिक दृष्टि से ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं माना जाता है ।

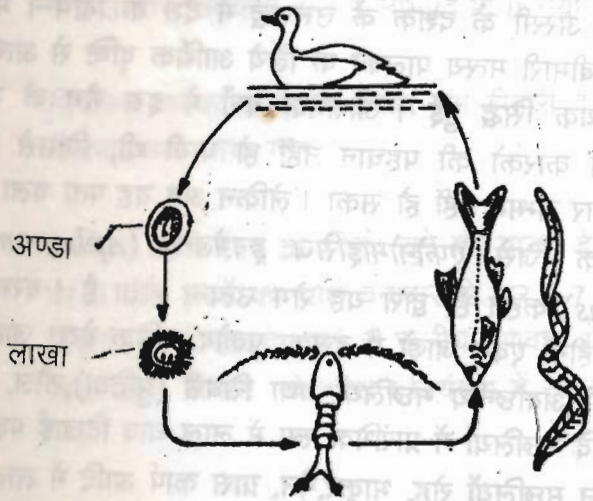

कोपीपोड (द्वितीय स्तर का परपोषी)

लिग्यूला कृमि का जीवन चक्र

उपचार

- रूग्न मछलियों को यथा सम्भव जलाशय से बाहर निकाल लेना लाभकारी होता है । परजीवी के जीवन चक्र में आने वाले तीन परपोषो (Host) में से किसी एक की अनुपस्थिति रोकथाम में सहायक होती है ।

- यह एक फैलने वाली बीमारी है, अतः रोगी मछलियों को जलाशय से बाहर निकाल लेने से अन्य मछलियाँ इसकी चपेट में नहीं आती हैं ।

11. लाल घाव की बीमारी

यह बीमारी अनेक नामों से जानी जाती है । जिसमें ***अल्सरेटिव सिन्ड्रोम, यू.डी.एस. एपिजूटिक अल्सरेटिव सिन्ड्रोम*** आदि प्रमुख हैं । अस्सी के दशक के उत्तरार्द्ध में देश के विभिन्न भगों में फैली यह बीमारी मत्स्य पालकों के लिये आर्थिक दृष्टि से अत्यंत ही नुकसानदायक सिद्ध हुई । आरंभिक वर्षों में इस रोग के उत्पन्न करने वाले कारकों की पहचान नहीं हो पायी थी, जिससे इसका सही उपचार सम्भव नहीं हो सका । लेकिन अब यह पता चला है कि एक कवक जिसे *एफोनोमाइसिज इनभेडन्स् (Aphonomyces invadans)* कहते हैं, द्वारा यह रोग उत्पन्न होता है । बरसात के बाद के महीनों एवम् जाड़ों में इसका प्रकोप अधिक देखा जाता है । तालाब की अवांछनीय मछलियों यथा सिधरी (पुटिया),सौल, गिरई, वुल्ला आदि मछलियों में प्रारंभिक रूप में लाल घाव दिखाई पड़ते हैं । यथा पालन मछलियों रोहू, भाकुर,नैन, ग्रास कार्प आदि में लाल-लाल घाव प्रकट होते हैं । इसके पश्चात् संक्रमित मछलियों की संख्या एवम् आकार बीमारी की गंभीरता के अनुसार कम-ज्यादा होती रहती है । मरी हुई मछलियाँ तालाब के किनारों पर देखी जा सकती है । रक्त रंजित लाल-लाल घावों का शरीर पर होना इस रोग का प्रमुख लक्षण है ।

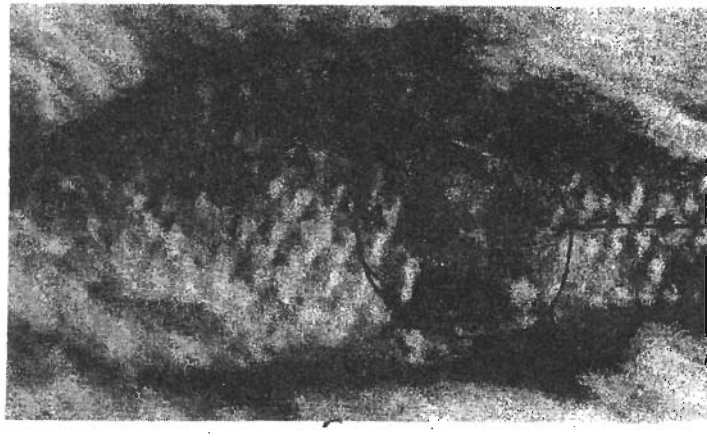

लालघाव (ई.यू.एस.) से संक्रमित सिधरी

उपचार

- चूने की 200 किग्रा./हे. मात्रा का एक सप्ताह के अन्तराल में 2-3 बार छिड़काव अत्यंत लाभप्रद पाया गया है ।

- *सिफैक्स* नामक दवाई का प्रयोग इस बीमारी की रोकथाम में प्रभावकारी पाया गया ।

- 5 किग्रा हल्दी एवम् 50 किग्रा चूने की मात्रा/ हे.मी. की दर से दोनों तत्वों का घोल बनाकर दो बार 5-7 दिन के अन्तराल में छिड़काव करने से जलीय गुणवत्ता में सुधार के साथ-साथ बीमारी के कारगर नियंत्रण में सहायक होता है ।

12. बैक्टीरिया द्वारा उत्पन्न लाल धब्बों की बीमारी

यह बीमारी *एरोमोनास हाइड्रोफिला* (*Aeromonas hydrophila*) एवम् *स्यूडोमोनस फ्लोरिसेन्न* (*Pseudomonas fluorescens*) नामक दो प्रकार के बैक्टीरिया द्वारा उत्पन्न होते हैं । जलीय परिवेश की गुणवत्ता में गिरावट जो कि मछलियों में तनाव पैदा करती है एवम् शारीरिक चोट या मछलियों को हाथों द्वारा बार-बार पकड़ने से उत्पन्न रगड़ जल के तापमान में अचानक परिवर्तन आदि से इस रोग की संभावना बढ़ जाती है । इस रोग के प्रारंभ में कुछ जगहों के शल्क (सेहर) निकले से दिखाई देते हैं और त्वचा के ऊपर लाल-लाल छोटे-छोटे धब्बे से हो जाते हैं । विदेशी प्रजाति की सिल्वर कार्प एवम् ग्रास कार्प मछलियों में, जो अधिक तापमान में असहज हो जाती हैं, इस बीमारी की होने की संभावना

अधिक रहती है। कभी-कभी इन रोगाणुओं से आँखों पर भी संक्रमण हो जाता है, फलस्वरूप आँखें सफेद दिखाई देने लगती हैं ।

उपचार

- चँकि यह रोग जीवाणु जनित है, अतः *एन्टीबायोटिक* के उपयोग से इस पर काबू पाया जा सकता है ।

- *टैरामाइसिन* 75-180 मिग्रा./किग्रा. मछली के वजन के हिसाब से मछली के भोजन में मिलाकर 7 दिन तक प्रयोग करने से ये जीवाणु मर जाते हैं । *सल्फागेरीजीन* नामक *एन्टीबायोटिक* भी इस रोग की रोकथाम में काफी गुणकारी होती है ।

- तालाब में निर्धारित मात्रा से अधिक मछलियों का संचय नहीं करना चाहिए ।

13. मछलियों की जलोदर बीमारी

इस बीमारी को उत्पन्न करने वाला जीवाणु *एरोमोनास हाइड्रोफिला* (*A. hydrophila*) के नाम से जाना जाता है । पहले के अध्ययनों से इसे विषाणु जनित रोग माना गया था, लेकिन हाल के अध्ययनों में यह दर्शाया गया है कि *एरोमोनास हाइड्रोफिला बैक्टीरिया* जिसके लगभग 155 स्ट्रेन पाये गये हैं । उन्हीं में से यह एक स्ट्रेन द्वारा यह रोग होता है । इस जीवाणु को अवसरवादी भी कहा जाता है । रोग वाली मछलियों के आँत और वाह्य त्वचा के बीच द्रव्य भर जाता है और पेट फूल जाता है साथ ही शल्क धीरे-धीरे शरीर से निकलने लगते हैं । शल्कों के बीच में भी पानी भर

जाता है । गंभीर अवस्था में पूरे शरीर के शल्क निकलने लगते हैं और मछलियाँ मरने लगती हैं । प्रजनक मछलियों में यह बीमारी ज्यादा देखी जाती है । भाकुर तथा कॉमन कार्प प्रजाति की मछली प्रायः इस बीमारी की चपेट में अधिक आती है । तालाब में खाद्य की कमी से भी इस तरह के रोग की संभावना अधिक देखी गई है।

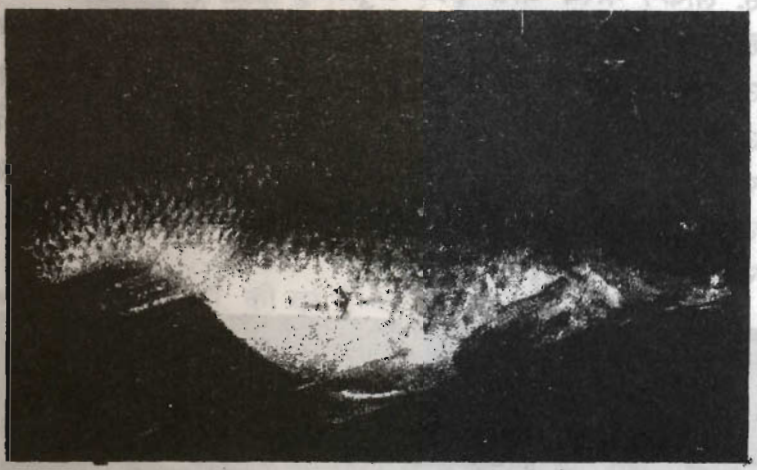

जलोदर से ग्रसित मछली

उपचार

- रोगग्रस्त मछलियों को तालाब से यथाशीघ्र बाहर निकालना ही एकमात्र सरल उपाय है, जिससे अन्य मछलियाँ प्रभावित न हो ।
- तालाब की मछलियों को संतुलित आहार की नियमित आपूर्ति आवश्यक है ।

14. पंख एवम् पूँछ की सड़न

यह रोग भी *एरोमोनास हाइड्रोफिला* (*A. hydrophila*) द्वारा फैलता है । बरसात के महीनों में इस रोग का प्रकोप अधिक देखा गया है । छोटी-बड़ी सभी मछलियों में यह बीमारी देखी जाती है, लेकिन मत्स्य जीरों एवम् अंगुलिकाओं में इसका प्रभाव अधिक होता है । अधिकाधिक संख्या में मत्स्य बीज संचय तालाबों में कीचड़ आदि की अधिकता, पूरक आहारों के कम मात्रा में उपलब्ध होना आदि अनेक तरह के कारण हैं, जिनसे इस बीमारी के होने की संभावना बढ़ जाती है । रोगग्रस्त मछलियों के पंख एवम् पूँछ सड़ने लगते हैं और टूट कर गिरने लगते हैं । अधिक गंभीर अवस्था में सम्पूर्ण पूँछ सड़ कर गिर जाती है ।

पंख एवं पूँछ की सड़न से ग्रस्त मछली

उपचार

- तालाब में 200 किग्रा./ हे. की दर से चूने का प्रयोग करना चाहिए ।

- 1 मिग्रा/ ली. की दर से *पोटेशियम परमैगनेट* तालाब में डालने से इस रोग के निवारण में मदद मिलती है ।

- पूरक आहार में 80-100 मिग्रा./ किग्रा. मछली के वजन के हिसाब से *टैरामाइसिन* एक सप्ताह तक देने से रोग पर नियंत्रण हो जाता है ।

- 1 ग्राम *मैलाकाइट ग्रीन* के रवा को 10 ली. पानी में घोलकर, दो तीन दिन के अन्तराल पर प्रभावित मछलियों को नहलाने से बहुत लाभ मिलता है ।

- 1 मिग्रा/ ली. की दर से *ब्लीचिंग पाउडर* का तालाब में सामान छिड़काव कर देने से इस रोग की रोकथाम हो जाती है ।

15. गैस के बुलबुले की बीमारी

यह *स्पॉन* एवम् जारों में प्रायः उत्पन्न हो जाने वाली यह एक प्रमुख बीमारी है । बड़ी मछलियों में यह विकार नहीं देखा गया है । वायुमण्डल एवम् तालाब के जल में उपस्थित गैसों के दबाव में अन्तर होने से गैस के छोटे-छोटे पारदर्शी बुलबुले मदलियों के शरीर के आँत के नीचे की तरफ वाले भाग में दिखाई पड़ते हैं, जो इस रोग की मुख्य पहचान है । पानी के तापमान का बढ़ना हैचरियों में अधिक वेग से पानी चला देने से उत्पन्न वायु की अधिकता आदि इस विकार के उत्पन्न होने में सहायक होते हैं । नर्सरी तालाबों में नील-हरित शैवाल की अधिकता भी एक महत्वपूर्ण उत्प्रेरक की भूमिका निभाती है । इस तरह के गैस के बुलबुले जब *स्पॉन* एवम् *जीरों* के

अन्दर प्रविष्ठ कर जाते हैं तो अत्यन्त कोमल और महीन रक्त नालिकाओं के सुचारू रक्त प्रवाह में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, जिससे बड़ी संख्या में मछलियाँ मर जाती है ।

उपचार

- नील-हरित शैवाल प्रचुरता वाले नर्सरियों में यदि यह रोग फैला हो तो प्रोटीन युक्त खाद्य देना कम करना चाहिए ।

- अधिक गति से नर्सरियों में पानी भरने से बचना चाहिए, विशेषकर अधिक क्षमता वाले पम्प इत्यादि के उयपोग के बजाय हल्की गति से पानी भरना चाहिए ।

- नर्सरी में नील-हरित शैवाल की रोकथाम के लिये तालाब में पड़ने वाली सूर्य की रोशनी में यदि साफ सुथरी तैरने वाली जलीय घासों को फैला दिया जाय तो इसमें कमी आ जाती है ।

- हैचरी में *स्पॉन* उत्पादन के समय यदि इस तरह की समस्या सामने आये तो प्रयुक्त जल का तापमान *इनक्यूबेशन* टंकों में पानी के बहाव आदि की यथोचित जाँच कर उचित कदम उठाने चाहिए ।

जलीय गुणवत्ता और मछलियों का स्वास्थ्य

पालन तालाबों, जीरा संवर्धन नर्सरियों में उपयोग किये जाने वाले जल के भौतिक- रासायनिक गुणवत्ता ही वस्तुतः अपेक्षित उत्पादन प्राप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण एवम् निर्णायक भूमिका अदा करती

है । इनका उचित रख-रखाव लाभप्रद होने के साथ-साथ रोगों के अतिक्रमण होने की संभावना को भी क्षीण कर देता है । इस संदर्भ में मत्स्य पालकों को निम्नलिखित विन्दुओं पर ध्यान देने की विशेष आवश्यकता है :

1. **तापमान और पानी की गहराई :** जल का तापमान पर्यावरण के तापमान के साथ घटता बढ़ता रहता है, परन्तु 34-35^{0}C तापमान से अधिक एवम् 15-16 ^{0}C से कम पर मछलियाँ तनावग्रस्त हो जाती है । 1 मी. से कम गहरे पानी वाली तालाबों में तापमान का बार-बार घटना-बढ़ना नुकसानदायक हो सकता है । इस स्थिति से बचने के लिये तालाबों में लगभग 2 मी.- 3 मी. तक पानी रखना आवश्यक है । साथ ही मछलियों को अपनी शारीरिक क्रियाओं के लिये जगह भी अधिक उपलब्ध हो जाती है । इसके साथ-साथ तालाब का पानी भी जल्दी गंदा नहीं होता है ।

2. **ऑक्सीजन :** संचय की गई मछलियों की सामान्य शारीरिक क्रियायें जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा पर निर्भर करती है । सामान्य रूप से 5-7 मिग्रा./ली. ऑक्सीजन में मछलियों की बढ़वार अच्छी होने के साथ-साथ रोगों की संभावना भी कम होती है । लेकिन अत्यधिक कीचड़ का जमाव, निर्धारित मात्रा से अधिक संख्या में मछलियों का संचय, तालाब का पेड़ों इत्यादि से ढका रहना, खाद एवम् खाद्यों का अत्यधिक मात्रा में प्रयोग आदि से घुलित ऑक्सीजन की मात्रा में गिरावट होती है । 2-3 मिग्रा./ली. से कम ऑक्सीजन में मछलियाँ तनावग्रस्त हो जाती हैं और सामूहिक मृत्यु का खतरा बना रहता है ।

तालाब में मत्स्य बीमारियों की पहचान एवम् रोकथाम हेतु अपनाये जाने वाले विभिन्न कदमों का संक्षिप्त सारांश

1. तालाब या नर्सरी में संचय की गयी मछलियाँ यदि मरी अथवा असामान्य दर्शाती हैं तो सावधानी पूर्वक सभी लक्षणों पर ध्यान देना होगा ।

2 यदि मछलियाँ सुबह के समय ही तालाब की सतह पर आती हैं और सूर्य निकलने के साथ सामान्य व्यवहार करने लगी है तो संभव है कि तालाब में घुलित ऑक्सीजन की कमी है । नील-हरित शैवाल की अधिकता, कार्बनिक पदार्थों का अधिक जमाव आदि इसके प्रमुख कारण है । गर्मियों की पहली बरसात एवम् बादल लगे उमस लगे वाले दिनों में भी सघन मत्स्य पालन तालाबों में इस तरह की समस्या उत्पन्न होती है । तालाब में 200-300 किग्रा./हे. के हिसाब से चूने का प्रयोग, *पोटेशियम परमैगनेट* का तालाब में छिड़काव, तालाब के पानी को बाँस के डन्डों से पीटना, केले के तने काटकर तालाब में डाल देना, पम्प द्वारा कृत्रिम वायुकरण आदि समस्या के त्वरित समाधान में सहायक होते हैं । लेकिन लम्बी अवधि तक इस तरह की समस्या उत्पन्न न हो, इसके लिये जिम्मेदार कारक की पहचान कर समाधान हेतु यथोचित उपाय करने चाहिए ।

समय-समय पर पालन तालाबों से 1-2 फीट पानी बाहर कर साफ पानी मिलाना, बड़ी मछलियों को तालाब से निकालकर इनका बिक्री कर देना, नियमित रूप से आवश्यक मात्रा में चूने का प्रयोग, तालाब के तल को समय-समय पर खरोंचना, अनावश्यक मात्रा में खाद्य एवम खादों का प्रयोग न करना आदि लाभकारी होते हैं । इसके साथ ही कृषक को अपने तालाब के पानी को किसी

निकटतम प्रयोगशाला में जाँच हेतु देना भी आवश्यक है, ताकि सही कारक का पता चल सके और उचित निवारण हेतु कदम उठाये जा सके ।

3. बीमारी की अवस्था में तालाब में जाल चलाकर दिखाई देने वाले लक्षणों को पहचान कर बीमारी की रोकथाम के उपाय अपनाना लाभदायक है । यदि बीमारी समझ में न आये तो किसी मत्स्य विशेषज्ञ की सलाह लेना उचित है । ध्यान रहे इस ओर जरा सी भी लपरवाही बरतने से आर्थिक क्षति उठानी पड़ सकती है ।

4. मछली पालन तालाबों में कीटनाशकों अथवा रसायनों का प्रयोग किसी विशेषज्ञ की सलाह से ही करनी चाहिए ।

5. जब भी निकटतम मत्स्य विशेषज्ञ के पास जाये, सूर्य उगने से पहले एक साफ बोतल में रोगग्रस्त तालाब का पानी भर कर साथ ही ताजी रोगी मछलियों को भी साथ लेकर जायें, क्योंकि सड़ी मछलियों में बीमारी की पहचान नहीं हो पाती है ।

6. यदि उपचार अत्यन्त महंगा हो तो स्वस्थ मछलियों को तालाब से निकालकर उनकी बिक्री कर देना उचित होता है ।

7. सभी तरह से अपनाये जानेवाले कदमों को यथाशीघ्र करना आवश्यक है । अन्यथा रोग की गंभीरता की अवस्था में इनकी रोकथाम करना आर्थिक दृष्टि से लाभदायी नहीं होता है ।

******